अविनाश भारती

मुजफ्फरपुर, बिहार

बिहार की समकालीन हिन्दी महिला ग़ज़लकारों की मूल संवेदना

यह स्पष्ट है कि हिन्दी में ग़ज़ल आगत विधा है जो अरबी, फ़ारसी और उर्दू से होती हुई हिन्दी तक आई है। जहाँ हिन्दी ने इसे आत्मसात करते हुए इसे नए रूप में ढाला है। आज की हिन्दी ग़ज़ल, जन चेतना से लैस होकर अपने सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक दायित्व का बख़ूबी निर्वाह कर रही है, अब वह ज़माने की आवाज़ और चेतना बन गयी है। वर्तमान काल में ग़ज़लों के यथार्थवादी चरित्र के कारण यथार्थ का खुरदुरापन उसका सौंदर्य बनता जा रहा है। अब वह ग़मों पर मरहम लगाकर व्यथित व्यक्ति को सुलाने की जगह उसे जगाने और कर्म क्षेत्र में संघर्ष करके अपनी तकदीर बदलने की प्रेरणा देने का कार्य कर रही है। आज के समकालीन ग़ज़लकार अपने चारों ओर के वातावरण में जो देख रहा है, उसी को शे'र के माध्यम से नज़्म कर रहा है। आज की ग़ज़ल की दृष्टि में यदि ऊँची हवेलियाँ हैं, तो टूटी-फूटी झोपड़ियों को भी वह नज़रअंदाज़ नहीं कर रही है।

अगर बिहार में समकालीन हिन्दी ग़ज़ल के स्वरूप और लेखन परम्परा को देखें तो बिहार हमेशा से साहित्यकारों, अध्यात्मिक गुरुओं और ऋषियों की घरती रहा है। आदि कवि विद्यापति से लेकर रामधारी सिंह दिनकर,आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री,बाबा नागार्जुन,फणीश्वरनाथ रेणु, गोपाल सिंह नेपाली,रामवृक्ष बेनीपुरी, भिखारी ठाकुर, अरुण कमल, आलोक धन्वा बुद्धिनाथ मिश्र आदि रचनाकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से हिन्दी साहित्य में अपना अमूल्य योगदान दिया है। एक ओर जहाँ बिहार का गद्य साहित्य जीवन के परिष्करण और उत्थान का साहित्य है वहीं दूसरी ओर पद्य साहित्य का भी अपना गरिमामय इतिहास है। बहरहाल, बिहार में ग़ज़ल लिखने वालों की लंबी कतार है। बहुत ऐसे नाम हैं जिन्होंने अपनी पहचान राष्ट्रीय स्तर पर बनाई है। पत्र-पत्रिकाओं से लेकर मंचों पर भी इनकी ग़ज़लें खूब पढ़ी और सराही जाती हैं। बिहार की ग़ज़लों में आंतरिक आवेग के साथ परिवर्तन की छटपटाहट है। जनमानस की पीड़ा से लेकर आतंकवाद और बाजारवाद के विरुद्ध आवाज़ें हैं। बिहार के ग़ज़लकारों ने ख़ामोशी की चादर से लिपटे लोगों को अपनी आवाज़ देते हुए उनके आंतरिक कोलाहल को प्रत्यक्ष करने का प्रयास किया है।

निःसंदेह समकालीन दौर में जितनी सक्रियता पुरुष रचनाकारों की है उससे तनिक भी कम महिला रचनाकारों की नहीं है। वर्तमान साहित्य में अस्मितामूलक विमर्श की धूम मची हुई है। स्त्री विमर्श

 ISSN:2583-8849

के जरिये महिलाओं ने अपने ऊपर हो रहे अत्याचार, दोहन और शोषण को घर की चार दीवारी से बाहर निकाला है और इस तथाकथित सभ्य पुरुष समाज को आईना दिखाने का अदम्य साहस किया है। आधी आबादी यानी बिहार की महिला ग़ज़लकार भी ग़ज़ल के बदलते स्वरूप के साथ हर पहलू पर अपनी बात रखती आई हैं। उन्होंने ग़ज़ल के परंपरावादी विषयों से आगे बढ़कर वर्तमान से जुड़ने की सफल कोशिश की हैं। उन्होंने अपने अंतर्मन की व्यथा,अपनी अस्मिता और स्त्री जाति के संघर्ष और निज अनुभव के साथ-साथ जीवन की विसंगतियों, विरोध, अत्याचार, शोषण,असमानता,सियासी दाँव-पेंच और मानवता पर मंडरा रहे ख़तरों पर अपनी धारदार कलम चलाई है। साथ ही धैर्य, समर्पण, प्रेम आदि जीवन मूल्यों की बातों को भी अपने शे'रों में बख़ूबी ढाला है। सर्वविदित है कि औरतों को जन्म से ही बंदिशों में रखा गया है और उन्हें रीति-रिवाजों की दुहाई देकर जकड़ा जाता रहा है। वे घर-परिवार से लेकर बाहर तक की ज़िम्मेदारियों को बख़ूबी निभा पाने का सामर्थ्य रखती हैं फिर भी समाज उनके अस्तित्व को और उनकी आजादी को स्वीकार नहीं कर पा रहा है। इस पर बिहार की संजीदा कवयित्री अभिलाषा कुमारी कहती हैं -

उन्हें भाती है ग़म को आँसुओं में घोलती औरत,
भला भाती नहीं आख़िर उन्हें क्यों बोलती औरत।

वैसे तो आज भी ज़्यादातर महिला ग़ज़लकारों की ग़ज़लों का विषय परंपरागत ही है। लेकिन कुछ नाम जिन्होंने अपनी रचनाधर्मिता का बख़ूबी निर्वहन किया है, उनमें डॉ. नीलम श्रीवास्तव प्रमुख हैं। इनकी ग़ज़लें समाज को आईना दिखाने का काम करती हैं। सरकार की गलत नीतियों का विरोध करना इनकी ग़ज़लों की विशेषता जान पड़ती है। बिहार की सशक्त महिला हस्ताक्षर नीलम श्रीवास्तव का ये शे'र देखें जो सरकार की तानाशाही का पुरजोर विरोध करता हुआ नज़र आता है। शे'र देखें -

तोड़ चिल्मन सड़क पर उतर जाएँगे,
ये न समझो के हम तुमसे डर जाएँगे।

डॉ. अनिता सिंह की ग़ज़लों की कहन शैली औरों से जुदा है। महिला होने के नाते इनकी संवेदनशीलता और सहनशीलता, इनकी ग़ज़लों में भी परिलक्षित होती हैं। इन्हें पता है कि शिकायत करने बाद भी बदलाव संभव नहीं है। अतः इस परिस्थिति में चुप रहना ही बेहतर है। शे'र देखें -

छोड़ो जाने भी दो कहने से क्या हासिल,
जुल्म उन्होंने हम पर ढाए कैसे-कैसे।

समकालीन महिला ग़ज़लकारों की अगुआई करने वाली डॉ. भावना वैसे तो बेहद सहज व संवेदनशील हैं लेकिन सत्ता की तानाशाही और आम-अवाम के शोषण पर इनके सब्र का बाँध टूटता है। परिणाम स्वरूप विरोध प्रकट करता हुआ कुछ ऐसे शे'र भी देखने को मिलते हैं -

अब तो लड़ाई है मेरी अन्याय के ख़िलाफ़,
हर झूठा का रख देंगे हम चोला उतारकर।

डॉ. नीलम श्रीवास्तव को समाज और राजनीति में सार्थक बदलाव की उम्मीद हैं। लेकिन यह उम्मीद बार -बार टूटती है। यहाँ सिर्फ़ सरकारें बदलती हैं, उनके काम करने का तरीका नहीं बदलता। कुर्सी पर बैठने वाला चाहे जो भी हो उसकी दृष्टि समाज में व्याप्त बुराइयों पर नहीं पड़ती। ख़ास करके महिलाओं की दुर्दशा के प्रति सरकार की उदासीनता भयावह है। यह शे'र देखें-

खेल होता बस सियासी नाम पर मेरे यहाँ,
दस्ताने द्रौपदी हर बार दोहराई गई।

डॉ. भावना भी सरकार की इसी उदासीनता को रेखांकित करने का प्रयास करती हैं। निः सहाय आम आदमी की ज़िन्दगी भी किसी तमाशे से कम नहीं होती। दुनिया भी इनके दुःख, दर्द का साथी बनने के बजाये मूक दर्शक बनी रहती है। शे'र देखें-

तमाशा हो रहे हैं हम, तमाशाई बनी दुनिया,
सियासत आगे जाने क्या नया करतब दिखाती है।

समकालीन हिन्दी ग़ज़ल की सशक्त महिला हस्ताक्षर डॉ. आरती कुमारी सियासत की अमानवीयता, बेहयाई के साथ-साथ आम जनता के डर को भी रेखांकित करती हुई कहती हैं -

ये सियासत मौत पे भी जश्न है करती,
कुछ कमी इसमें हमारी,खौफ़ तारी है।

आराधना प्रसाद बतौर संजीदा ग़ज़लकार अपनी पहचान पाती हैं। इनकी ग़ज़लों में क्षणिक मनोरंजन और फूहड़ता की जगह जीवन का चिरकालीन खुरदुरा यथार्थ है जो इन्हें विशिष्ट बनाता है। इनका यह बेहद चर्चित शे'र 'चाक पर घूमती रही मिट्टी' विषम परिस्थितियों में आदमी की जिजीविषा और हौसलों का द्योतक है। इनके आशावादी दृष्टिकोण को समझने के लिए इस मुकम्मल शे'र को देखें -

इक नई ज़िन्दगी की चाहत में,
चाक पर घूमती रही मिट्टी।

आरती आलोक वर्मा, महिलाओं की दयनीय स्थिति की ओर ईशारा करती हैं। साथ ही उसकी वज़ह भी बताती हैं। गौर करे तो यह बात भी सही है कि महिलाओं की चुप्पी, उनकी अत्यधिक सहनशीलता और ख़ुद के बजाए पुरुष वर्ग पर आश्रित होना ही उनके दुखों का मूल कारण है। इस बाबत आरती आलोक वर्मा का यह बेहद उल्लेखनीय शे'र ध्यातव्य है-

हाशिए पर हम आ गए ख़ुद ही,
हमने ही हाशिए बनाए हैं।

ऋता शेखर 'मधु' भी इन्हीं कारणों को महिलाओं की दुर्दशा का कारण बताती हैं। शे'र देखें -

शिकायत कर नहीं पाती ख़िलाफ़त कर नहीं पाती,
उसे सहने की आदत है बग़ावत कर नहीं पाती।

नीलू चौधरी मानती हैं कि महिलाओं की नियति ही तन्हा रहना है। शादी के बाद पहले उनका मायका छूटता है, फिर जब बच्चे बड़े हो जाते हैं तब अच्छी तालीम के वास्ते बच्चों से दूर होती हैं और फिर अंत में बुढ़ापे में पथराई आँखों से उनका इंतजार करते हुए जीवन गुज़ार देती हैं। माँओं और महिलाओं के अकेलेपन को शब्द देता हुआ यह अनूठा शे'र गौर करें -

हुए बच्चे हैं घर से दूर जब से,
कि घर सूना पड़ा है और मैं हूँ।

माधवी चौधरी का यह बेहद संजीदा शे'र पितृसत्तात्मक समाज द्वारा बनाए व्यवस्था पर कुठाराघात करता हुआ प्रतीत होता है जहाँ पति को जीवन साथी, सहचर होने के बजाए परमेश्वर का दर्ज़ा प्राप्त है। अब भला परमेश्वर के प्रति कोई प्रेम भाव कैसे रख सकता है! परमेश्वर के प्रति तो दास्य भाव रखे जा सकते हैं क्योंकि परमेश्वर तो पूजनीय हैं। शे'र देखें -

प्यार उससे क्या करोगी 'माधवी' तुम,
दिल में जो बस देवता बनकर रहेगा।

रूपम झा, महिलाओं के बदलते विचारों का समर्थन करती हैं, उन्हें उनकी शक्तियों से अवगत कराती हैं। साथ ही उनके अंदर नई चेतना का संचार का करती हैं। विदित हो कि आजकल की महिलाएं हर क्षेत्र में अपनी अमिट उपस्थिति दर्ज़ करा रही हैं। पुरुषों के कदम से कदम मिला कर अपनी कार्यकुशलता का परिचय दे रही हैं। इस सन्दर्भ में इस शे'र को देखा जा सकता है।

अब तो रोने सिसकने की फ़ुर्सत नहीं,
इस जहाँ को चलाने लगीं औरतें।

चाँदनी समर, युवा एवं संभावनशील ग़ज़लकार हैं। लेखन के शुरुआती दौर में ही इनकी ग़ज़लों में सामाजिक सरोकार का होना ग़ज़ल के सुखद भविष्य का द्योतक है। शून्य पड़ती मानवता को रेखांकित करता हुआ उनका यह खूबसूरत शे'र देखें -

तोलते हैं इक तराजू में सभी रिश्तों को लोग,
शै हरिक महँगा हुआ सस्ता हुआ इंसान है।

बेहद सरल एवं सहज स्वभाव की वरिष्ठ साहित्यकार रूबी भूषण अपनी अन्य साहित्यिक विधाओं की भाँति पाठक वर्ग को अपनी ग़ज़लों से भी बेहद प्रभावित करती हैं। स्त्रियों की मनोदशा को बड़ी ही संजीदगी से प्रस्तुत करने वाली शायरा रूबी भूषण का यह शे'र गौर करें -

देखा जो नींद में कभी हमने तमाम रात,
लेकिन सुबह हुई तो सपने बिखर गए।

रेखा भारती मिश्रा, अमीर तबके के धनमांध एवं आरामपोश लोगों को सच्चाई से रू-ब-रू कराने का प्रयास करती हैं। उन्हें पता है कि देश के एक हिस्से को बड़ी ही आसानी से स्वादिस्ट व्यंजन उपलब्ध हो जाते हैं जबकि इसी देश में कई लोगों को रोटी के आभाव में भूखा रहना पड़ता है। और ये आंकड़ा निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। शे'र देखें-

रोटियों की है क्या क़ीमत जान पाएँगे तभी,
छोड़ रोटी, भूख को अपनी बढ़ा कर देखिए।

डॉ. पूनम सिन्हा श्रेयसी की पैनी नज़र हर सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक विसंगतियों को रेखांकित करने में सक्षम है। इनकी ग़ज़लों का तेवर भी इंक़लाबी जान पड़ता है। समाज में एक वर्ग ऐसा भी है जो अपने परिवार का सृजनकर्ता और पालनहार होने के बावजूद भी बिल्कुल असहाय और तन्हा जीवन जीने को अभिशप्त है। आज परिवार का तात्पर्य पति, पत्नी और बच्चों तक ही सीमित है। अब इसमें दादा-दादी के लिए कोई स्थान नहीं रह गया है। यह दुर्भाग्य ही है कि हमारे देश में निरंतर वृद्धाश्रम खुलते जा रहे हैं जबकि हर व्यक्ति को एक दिन अपने हिस्से के बुढ़ापे को जीना है। अश'आर देखें-

हुआ लाचार बेबस अब सहे ताने हजारों है,
समंदर आँख का बनना बुढ़ापे की कहानी है।

बनाया था इसी घर को मोहब्बत की कमाई से,
किसी कोने पड़े रहना बुढ़ापे की कहानी है।

श्वेता ग़ज़ल, स्त्री जीवन की त्रासदी और कठिनाइयों को ग़ज़ल लेखन की बुनियादी शर्तों से समानांतर रूप में जोड़कर देखती हैं। इनकी माने तो इनकी ग़ज़लें स्त्री दुर्दशा की पूरक हैं। उदाहरण स्वरूप यह खूबसूरत शे'र देखें-

ख़ून में उंगलियाँ मैं डुबोती रही,
ग़म 'ग़ज़ल' का ग़ज़ल से जुदा तो न था।

निष्कर्ष: बिहार की समकालीन हिन्दी महिला ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल के परम्परागत कथ्यों का परित्याग कर नये विषयों को आत्मसात किया है जिसमें ज़्यादातर उनके ख़ुद का भोगा हुआ जीवनानुभव है। हर तरह की विसंगतियों को रेखांकित करना इनके ग़ज़ल लेखन की पहली शर्त जान पड़ती है। विदित हो कि यह फ़ेहरिस्त यही समाप्त नहीं होती। और भी नाम हैं जो निरंतर सृजनशील हैं। लेकिन उनमें ज़्यादातर ग़ज़लकार आज भी प्रेम की परिधि से बाहर नहीं निकल सके हैं। हालाँकि प्रेम पर लिखना कोई ऐब नहीं है लेकिन जहाँ बेरोजगारी, लाचारी, भूखमरी आदि जैसी विकराल समस्याएं हमारे सामने खड़ी हों वहाँ ऐसी ग़ज़लों का सृजन रचनाकार की रचनाधर्मिता पर सवाल खड़े कर देता है।